द्वितीय अध्याय

गांधीवाद : व्याख्या एवं स्वरूप

२.१ प्रस्तावना -

महात्मा गांधी जी का व्यक्तित्व भारतीय संस्कृति के मूलभूत तत्वों से ओत-प्रोत हैं। उनका जीवन हमारी संस्कृति का निचोड़ हैं। इस कारण जो लोग भारतीय संस्कृति के प्रति आस्था रखते हैं, उनके लिए गांधी जी देवता-समान हैं। भारतीय संस्कृति की तरह गांधी जी का व्यक्तित्व भी महान है, इसनें कोई सन्देह नहीं। उनके विचारों में विश्व की सभी समस्याओं का हल मिलता है । भारतीय संस्कृति के साथ ही गांधी जी की यही विश्व को सब से बड़ी देन है।

महात्मा गांधी जी के व्यक्तित्व एवं उनके विचारों को जान लेने का प्रयत्न आज तक अनेकों ने किया है। उन सभी ने अपनी ओर से उनके विचारों की व्याख्याऐं भी करने का प्रयास किया है। प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबन्ध के इस अध्याय में प्रबन्ध-लेखक ने भी यही प्रयास किया है।

२.२. 'गांधीवाद' की व्याख्या एवं 'गांधीवाद' से तात्पर्य -

यद्यपि महात्मा गांधी जी ने स्वयं गांधीवाद की कोई निश्चित रूपरेखा तथा व्याख्या नहीं की है, फिर भी 'गांधीवाद' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम उन्हीं ने किया था। २५ मार्च १९३१ में सम्पन्न करांची अधिवेशन के अवसर पर उन्होंने कहा था -

"गांधी मर सकता है, पर गांधीवाद अमर रहेगा।" १

इस कारण आगे इस शब्द का प्रयोग करने की परिपाटी चल पड़ी। गांधी जी के विचार और कार्यक्रमों के लिए आज भी 'गांधीवाद' शब्द का प्रयोग किया जाता है। लेकिन स्वयं गांधी जी को यह शब्द अनुचित लगता था, क्योंकि 'वाद' शब्द से साधारणतः किसी नाम का बोध होता है। इस दृष्टि से 'गांधीवाद' का अर्थ होगा, गांधी एवं उनका नाम। अतः 'गांधीवाद' शब्द अपने शाब्दिक अर्थ में निरर्थक ही है। उसकी सार्थकता उसी समय है, जब वह किसी निश्चित सिद्धान्त को प्रस्तुत करे। लेकिन गांधी जी अपने सिद्धान्तों के सम्बन्ध में किसी वाद-विवाद को कोई स्थान नहीं देना चाहते थे। सन् १९३६ में गांधी-सेवा-संघ के सदस्यों के समक्ष भाषण देते हुए उन्होंने कहा था -

"गांधीवाद नाम की कोई चीज नहीं है और न ही अपने पीछे
मैं कोई ऐसा सम्प्रदाय छोड़ जाना चाहता हूँ। मैं कदापि यह दावा

नहीं करता कि मैंने किन्हीं नये सिद्धान्तों को जन्म दिया है। मैंने तो अपने निजी तरीके से शाश्वत सत्यों को दैनिक जीवन और उसकी समस्याओं पर लागू करने का प्रयत्न मात्र किया है। मैंने जो सम्मतियाँ बनाई हैं और जिन परिणामों पर पहुँचा हुआ हूँ, वे अन्तिम नहीं हैं। मैं उन्हें बदल भी सकता हूँ। मुझे संसार को कुछ नया नहीं सिखाना है । मेरा दर्शन, जिसे आपने गांधीवाद नाम दिया है, सत्य और अहिंसा में निहित है। आप इसे गांधीवाद के नाम से न पुकारें, क्योंकि इसमें कोई वाद तो है नहीं।"[२]

गांधी जी के इस कथन से सिद्ध होता है कि वे 'वाद' के झगड़े से मुक्त रहना चाहते थे और उनके सिद्धान्तों को ही 'वाद' कहा गया है। उनके इतने स्पष्टीकरण के बाद भी गांधी-दर्शन के मर्मज्ञों ने उनकी विचारधारा को ' वाद' के रूप में समझने तथा समझाने का प्रयास किया है। इस विषय में हम इतना ही कह सकते हैं कि गांधी जी ने सिद्धान्त-रूप में जिन विचारों को अभिव्यक्ति दी है, उन्हीं को 'गांधीवाद' की संज्ञा मिली है। वस्तुतः गांधी-विचारधारा का नाम ही 'गांधीवाद' है। 'गांधीवाद' से तात्पर्य उन सभी सिद्धान्तों से हैं, जिनका गांधी जी ने समर्थन तथा प्रयोग किया था। इस विचारधारा का संक्षिप्त अर्थ 'व्यक्ति तथा समाज के हित का वह दर्शन है, जिसके पुरस्कर्ता तथा प्रयोग-कर्ता गांधी जी हैं'। यह उनके जीवन का क्रियात्मक विज्ञान है, जो प्रतिक्षण परीक्षण, परिष्करण, समन्वय और साधना से पुष्ट है। गांधी-दर्शन केवल राजनीति ही नहीं है, वह जीवन का स्वस्थ दृष्टिकोण है। इसका आधार तर्क नहीं, विश्वास और संस्कार है।

गांधी जी के अन्यतम भक्त एवं विचारक श्री. पट्टाभिसीतारमैया ने 'गांधीवाद' को स्पष्ट करते हुए कहा है -

" 'वाद' का अभिप्राय नाम से है। तब ' गांधीवाद' का अभिप्राय गांधी के नाम से है और गांधी एवं उनका नाम निरर्थक है, यदि उससे किन्हीं निश्चित सिद्धान्तों और नीतियों का बोध नहीं होता है। वस्तुतः इन सिद्धान्तों और नीतियों से मिल कर ही गांधी जी का दर्शन बना है। ..... 'गांधीवाद' से अभिप्राय उस

दर्शन से है, जिसमें उनके जीवन और चरित्र को, उनके कार्य और सिद्धियों को, उनके उपदेशों और शिक्षाओं को नया रूप प्रदान किया है।" ३

'गांधीवाद' की व्यापक व्याख्या करते हुए श्री. कमलापति त्रिपाठी लिखते हैं-

"जिस जगत् व्यापिनी प्रवृत्ति और क्रिया का सक्रिय रूप भारत में व्यक्त हुआ, उसकी प्रतिक्रिया भी यही हो सकती है। यूरोप ने इस देश की समस्याओं और परिस्थितियों को जिस विकटता और उलझन में डाल दिया था, उसका प्रतिकार भी यही देश कर सकता था। जगत् की परिस्थिति यदि समस्याओं के हल की मांग कर रही थी, तो भारत की दशा भी उसी मांग की अपेक्षा कर रही थी। गांधी का उदय उसी मांग का परिणाम है। वे सम्मुख हैं, उस परिस्थिति के गर्भ के, जो स्वभावतः उपर्युक्त समस्याओं की विभीषिका से छुटकारा पाने की मांग कर रही थी।

यही कारण हैं कि परिस्थितियों के अनुकूल पथ और पद्धति लेकर वे अवतरित हुए। वही पथ और पद्धति 'गांधीवाद' के नाम से जगत के सामने उपस्थित है।" ४

रामनाथ सुमन ने 'गांधीवाद' की व्याख्या करते हुए कहा है -

" 'गांधीवाद' सत्य की साधना का विज्ञान है।" ५

डॉ. कु. शैलबाला के विचारों में गांधी जी के सिद्धान्तों को ' गांधीवाद' न कह कर 'सर्वोदय का सिद्धान्त ' कहना अधिक उचित है। वह 'गांधीवाद' को 'गांधी जी की विचारधाराओं का एक सुसंस्कृत नाम' ही मानती हैं। ६ 'गांधीवाद और नाजीवाद' का विश्लेषण करते हुए उन्होंने लिखा है -

" 'गांधीवाद' कोई राजनीतिक वाद-विशेष नहीं है, वरन् समस्त राजनीतिक वादों में सन्निहित जन कल्याण की भावना का संकलन मात्र कह लेना अधिक श्रेयस्कर है। .... अन्य सिद्धान्त जहां युद्ध,

हिंसा आदि का आश्रय लेकर समाज में समानता स्थापित करना चाहते हैं, वहां गांधीवाद अहिंसा का आश्रय ले समाज में यह समानता स्थापित करना चाहता है। मानव कल्याण की भावना, अहिंसा, सत्य आदि गांधीवाद के प्राण तत्त्व हैं।" ७

'गांधीवाद' कोई परिकल्पना नहीं है। यह महात्मा गांधी जी के सन् १८६९ ई. से १९४८ तक की विचार-पद्धति का व्यापक नाम है। ८ इसकी व्यापकता उनके व्यक्तित्व के व्याप से जुड़ी है। उनकी निजी अनुभूतियाँ तथा तदनुरूप बनी सम्मतियाँ ही 'गांधीवाद' के अंतर्गत समाई हैं। डॉ. सम्पूर्णानन्द लिखते हैं -

" 'गांधीवाद' की सबसे बड़ी व्याख्या गांधी जी का जीवन है।" ९

अर्थात 'गांधीवाद' उतना ही व्यापक है, जितना गांधी का जीवन। अपनी आत्मकथा में गांधी जी ने यह स्पष्ट किया है कि उनका जीवन किस प्रकार 'सत्य की खोज' का प्रयास है। अपने जीवन में उन्होंने अनेक प्रभाव ग्रहण किये। धार्मिक नीति-तत्त्वों का प्रभाव उन पर बचपन से ही था। युवावस्था में वे 'बाइबल' में व्यक्त प्रेम की शिक्षा तथा बुद्ध की करूणा से प्रभावित हुए। लगभग इसी समय रस्किन, टॉलस्टॉय तथा थोरो आदि विचारकों से उन्होंने प्रभाव ग्रहण किया। इनके साथ ही जीवन से प्राप्त विभिन्न अनुभवों से उनकी जीवन-दृष्टि बनी थी।

अपनी दैनिक साधना के मध्य से गुजरते हुए गांधी जी ने अपने विचारों का प्रतिपादन किया था। फिर भी उनके विचार शुरू से अंत तक अपरिवर्तनीय रहे हो, ऐसी बात नहीं है। जीवन के विभिन्न मोड़ों पर उन्हें अपने पुराने विचारों में परिवर्तन भी करना पड़ा था। इस कारण उनके पुराने और नये विचारों में भिन्नता दिखाई देती हैं। इस प्रकार की भिन्नता किसी सिद्धान्त या तत्त्वज्ञान में नहीं दिखाई देती। इसी कारण 'गांधीवाद' को 'सिद्धान्त या तत्त्वज्ञान' कहना भूल होगी, उसे हम 'गांधी जी की जीवन-दृष्टि ' अवश्य कह सकते हैं, क्योंकि गांधी जी ने केवल उन्हीं विचारों का समर्थन तथा प्रतिपादन किया था, जो उनके कार्यों के अनुकूल थे। १० गांधी जी ने अपने विचारों के अनुकूल जीने का सतत् प्रयास किया। उनकी कथनी और करनी में फर्क नहीं था।

'सिद्धान्त या तत्त्वज्ञान' की अभिव्यक्ति एक विशिष्ट पद्धति से की जाती है, लेकिन

गांधी जी के विचारों की अभिव्यक्ति में ऐसी विशिष्ट पद्धति का अभाव है। गांधी जी ने समय-समय पर अपने विचार व्यक्त किये थे - केवल अनुभव-कथन के रूप में, 'सिद्धान्त या तत्त्वज्ञान' के रूप में नहीं। प्लेटो, कांट, मार्क्स आदि विचारकों ने जिस पद्धति से अपने विचारों की अभिव्यक्ति की, उस पद्धति से गांधी जी ने अपने विचार नहीं व्यक्त किये थे। 'हिन्दी साहित्य कोश' में लिखा है -

> " मार्क्सवाद के समान कोई व्यवस्थित शास्त्रीय अध्ययन गांधीवाद के पीछे नहीं है। इसी कारण उसमें किसी प्रकार की तर्कजन्य पद्धति का अभाव है। गांधीवाद का आधार तर्क नहीं, स्वानुभूति है।" ११

संक्षेप में, विचारों की परिवर्तनशीलता और किसी विशिष्ट अभिव्यक्ति या रचना-पद्धति के अभाव के कारण 'गांधीवाद' सिद्धान्त नहीं बन सकता है, वह तो गांधी जी की 'जीवन जीने की पद्धति या दृष्टि का नाम' है।

श्री. किशोरीलाल मशरूवाला ने 'गांधीवाद' को तीन रूपों में विभक्त किया है - १) वर्ण-व्यवस्था, २) ट्रस्टीशिप, ३) विकेंद्रीकरण । १२

आचार्य विनोबा जी ने 'गांधीवाद' पर अपना मत व्यक्त करते हुए उसे ' समाज की बँधी कल्पनाओं का परिवर्द्धन और विकास करने वाला सिद्धान्त' माना है। १३

महात्मा गांधी एक प्रतिभा-सम्पन्न महापुरूष थे। इसलिए रवींद्रनाथ टैगोर ने उन्हें 'महात्मा' शब्द से विभुषित किया था। हिन्दुस्तान के अंतिम व्हाईसराय लॉर्ड माउंटबॅटन ने गांधी जी की तुलना गौतम बुद्ध तथा जीजस ख्राईस्ट से की थी।१४ आईन्स्टाइन ने गांधी जी के विषय में कहा था -

> "आने वाली शताब्दियां संभवतः यह विश्वास भी नहीं कर पायेंगी कि गांधी जी जैसा हाड-मांस का पुतला इस जमीन पर हमारे बीच मौजूद था।" १५

भारत के अध्यात्म-चिन्तन, सामाजिक व्यवहार, राजनीति, राष्ट्रीयता आदि सभी क्षेत्रों पर गांधी जी का प्रभाव पड़ा है। गांधी जी का व्यक्तित्व बहुमुखी था। वे समाज-सुधारक, अर्थवेत्ता, राजनीतिज्ञ, धर्मोपदेशक तथा शिक्षा-शास्त्री के रूप में हमारे सम्मुख उपस्थित होते हैं। साधारण जीव के जीवन में हर क्षण उपस्थित होने वाली हर समस्या के समाधान का

आधार 'गांधीवाद' है, इसलिए वह परिपूर्ण है।

२.३. गांधीवाद का स्वरूप -

हमने 'गांधीवाद' को गांधी जी की विचारधारा एवं गांधी जी की जीवन दृष्टि कहा हैं। गांधी जी की यह जीवन दृष्टि सर्वांगस्पर्शी थी। जीवन के विविध पहलुओं का अध्ययन करते हुए उन्होंने उनके बारे में अपने विचार व्यक्त किये हैं। अध्यात्म, धर्म एवं नीति, समाज, अर्थ तथा राजनीति आदि बातों को प्रधानता देते हुए उनके अंतर्गत कई तत्त्व निर्धारित किये थे। गांधीवाद का स्वरूप निर्धारित करते समय उन तत्त्वों का अध्ययन आवश्यक हो जाता है। गांधी-विचारधारा के प्रमुख तत्त्व निम्नानुसार हैं-

२.३.१. आध्यात्मिक विचारधारा -

गांधीवाद का आध्यात्मिक पक्ष गांधी जी के आस्तिक दृष्टिकोण के कारण विशिष्टता रखता है। गांधी जी अध्यात्म एवं विज्ञान के समन्वय के पक्षपाती थे। वे धर्म और नैतिकता को आचरण का अभिन्न अंग स्वीकार करते थे। उनके नैतिक विश्वासों का आधार ईश्वर में अटल विश्वास और आत्मा को प्राथमिकता आदि है। गांधी जी के अनुसार ईश्वर और आत्मा - दोनों में कोई अंतर नहीं है। आत्मा महान है, अतः भौतिक शक्तियों के साथ उसकी तुलना व्यर्थ है। आत्मा की शक्ति सबसे बड़ी होती है।

गांधी जी कर्म और पुनर्जन्म के सिद्धान्त में विश्वास करते थे। उनका मत था कि कर्म का नियम अटूट है और उसे टाला नहीं जा सकता। वे पुनर्जन्म में उतना ही विश्वास करते थे, जितना अपने वर्तमान शरीर के अस्तित्व में । इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि गांधीवाद का आध्यात्मिक पक्ष प्राचीन काल से ऋषियों द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों का ही नवीन मूल्यांकन है और गांधीवादी सिद्धान्तों (सत्य और अहिंसा) का आश्रय ग्रहण कर उन्हें नवीन समस्याओं के समाधान का साधन नियत किया गया है।

२.३.१.१. सत्य -

'सत्य' की उत्पत्ति ' सत्' शब्द से हुई है। 'सत्' का अर्थ है- त्रिकालाबाधित एक रूप में अस्तित्व में रहने वाली वस्तु। इसका सम्बन्ध परमात्मा से है। अर्थात सत्य ही परमात्मा है। यह गांधी जी के जीवन और दर्शन का ध्रुवतारा है। गांधीवाद के मूल उपकरणों में सत्य का स्थान सर्वप्रथम है। गांधी जी खुद को सत्य का शोधक मानते थे। इसलिए

उन्होंने अपनी आत्मकथा का नाम 'सत्य के प्रयोग' रखा है। अपनी आत्मकथा में उन्होंने केवल सिद्धान्तों और तत्त्वों का वर्णन नहीं किया है, वरन् उनके आधार पर किये गये कार्यों का इतिहास भी बताया है।

'सत्य' गांधी-विचारधारा का मूलमन्त्र है। इसके अंतर्गत गांधी-विचारधारा का आध्यात्मिक तथा दार्शनिक पक्ष समाहित है। गांधी जी के लिए सत्य कल्पना मात्र नहीं, बल्कि एक जीवित आदर्श है। उन्होंने अपने जीवन के द्वारा यह प्रमाणित कर दिया कि 'सत्य' केवल सिद्धान्त नहीं, आचरण का विषय भी हो सकता है। सत्य बात का गोपन करना भी उतना ही असत्य है, जितना असत्य बोलना। सत्य की प्राप्ति सहनशीलता और नम्रता से ही हो सकती है। इस सर्वव्यापी सत्य के साक्षात्कार के लिए अहिंसा की साधना अनिवार्य है, क्योंकि अहिंसा के बिना सत्य-दर्शन असम्भव है।

२.१.१.२. अहिंसा -

सत्य की भाँति अहिंसा भी अत्यंत पुरातन धर्म-सिद्धान्त है। अहिंसा की परम्परा भारतीय धर्म, दर्शन तथा साहित्य में सुदूर अतीत काल तक दृष्टिगत होती है। बौद्ध धर्म के साथ ही विश्व के प्रायः सभी धर्मों में अहिंसा को किसी-न-किसी रूप में मान्यता मिली है। महात्मा गांधी जी ने अहिंसा को अपने ढंग से निरूपित करते हुए उसकी नवीन व्याख्या की। इसलिए यह सिद्धान्त प्राचीन होते हुए भी नवीन है।

गांधीवाद के अंतर्गत अहिंसा का विशेष महत्व है। सामान्य परम्परा में अहिंसा को दुर्बलों का शस्त्र माना जाता है। लेकिन गांधी जी की दृष्टि में अहिंसा वीरता की सीमा है, किन्तु कायरता तो हिंसा से बड़ी नपुंसकता है। कायर से तो हिंसक ही श्रेष्ठ है। इस कारण गांधी जी ने भय से दब जाने की जगह तलवार उठाने की खुली छूट दी है। १६ अहिंसा वास्तव में शक्तिशाली और वीर का गुण है, कायरों का नहीं। गांधी जी ने लिखा है-

> "मेरी अहिंसा अत्यंत क्रियाशील शक्ति है। उसमें कायरता तो क्या दुर्बलता के लिए भी स्थान नहीं है।" १७

भारतीय हिन्दू धर्म में अहिंसा ऋषियों का सिद्धान्त माना गया है, किन्तु गांधी जी ने इसे जनसाधारण का सिद्धान्त माना। उन्होंने पहली बार जनव्यापी आन्दोलन के अवसर पर अहिंसा का प्रयोग किया और यह सिद्ध किया कि अहिंसा व्यक्तिगत साधना के [illegible] ही नहीं

12444
A

है, बल्कि सामूहिक कार्यों में भी उसका महत्व है। गांधी जी का विश्वास था कि अगर अहिंसात्मक उपायों द्वारा भारत स्वतंत्रता प्राप्त कर लेगा, तो स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करने वाले अन्य देशों के सामने भी वह अहिंसा का आदर्श प्रस्थापित करेगा। अहिंसा के द्वारा विश्व-शांति के एक नूतन और अभूतपूर्व मार्ग का उद्घाटन किया जा सकता है। इस प्रकार गांधी जी ने अहिंसा को विश्व-कल्याण के लिए उपयोगी बताया। उनका विश्वास था कि अहिंसा को संगठित कर उसके द्वारा बड़ी-बड़ी राजनीतिक तथा सामाजिक समस्याओं का हल ढूँढा जा सकता है।

गांधी जी की अहिंसा की सब से बड़ी विशेषता उसकी व्यापकता है। उनकी दृष्टि में जीव-हत्या के साथ-साथ किसी को मानसिक क्लेष पहुँचाना तथा परिग्रह, अविनय, अहंकार भी हिंसा है। अहिंसा खाद्याखाद्य विषय से परे है और नम्रता के बिना वह असंभव है। ब्रह्मचर्य, अस्वाद, अपरिग्रह आदि सब अहिंसा में लीन हो जाते हैं। अहंकार शरीर की वृत्ति है, तो अहिंसा आत्मा की। इसी कारण वह अधिक सशक्त, अडिग और प्रभावी सिद्ध होती है। अहिंसा के मूल में 'जियो और जीने दो' की भावना कार्य करती है।

यदि ऐतिहासिक दृष्टिकोण से विचार किया जाय, तो यह ज्ञात हो जायेगा कि सत्य और अहिंसा - दोनों ही कोई नवीन अथवा मौलिक तत्त्व नहीं हैं, वरन् इनकी परम्परा भारत के धर्म, दर्शन, साहित्य और समाज में सुदूर अतीत काल से मिलती है। अंतर केवल इतना ही है कि महात्मा गांधी ने आधुनिक युग के जीवन के अनुरूप इनके व्यावहारिक रूप को एक अभिनव दृष्टि के साथ सामने रखा है। युग-युगान्तर से भारतभूमि पर सत्य व्याप्त रहा है। इतिहास में अनेक ऐसे उदाहरण मिलते हैं, जब मनुष्य ने प्राण त्याग देना उचित समझा, परंतु सत्य की रक्षा की । परमहंस तथा स्वामी विवेकानंद ने भी सत्य को सर्वोच्च्य स्थान दिया था। गांधी जी इन दोनों से अत्यधिक प्रभावित थे। इस कारण उन्होंने भी अपने जीवन में सत्य को प्राथमिकता दी। गांधी जी ने सत्य को अहिंसा से भी उच्च स्थान दिया है। सत्य ही सदैव जीतता है, झूठ नहीं। सत्य से बढ़ कर कोई धर्म नहीं और झूठ से बढ़ कर कोई पाप नहीं। वास्तव में, गांधी-विचारधारा 'सत्य की साधना' है।

२.३.२. आचार-विषयक विचारधारा -

धर्मप्राण महात्मा जी के अनुसार धर्म की वास्तविक अभिव्यक्ति सदाचार है। अर्थात् धर्म

का निचोड़ नैतिकता के पालन में है। महात्मा जी ने रहस्यमय धर्म को सरल रूप में सर्व साधारण के लिए बोधगम्य बनाने का सफल प्रयास किया है। गांधी जी प्रधानतः हिन्दू धर्म के अनुयायी थे, किन्तु उनके हृदय में मानव-धर्म के प्रति विशेष अनुराग था। उनका विश्वास था कि विभिन्न धर्म एक ही सत्य की प्राप्ति के अलग-अलग मार्ग हैं। साथ ही सभी धर्म सत्य होते हैं और सभी धर्मों में कोई-न-कोई भूल या कमी अवश्य होती है। सभी धर्म उनके लिए उतने ही प्रिय हैं, जितना हिन्दू धर्म। गांधी जी के मतानुसार धर्म वह सेतु है, जो मनुष्य को पूर्ण-सत्य तक पहुँचाता है। धार्मिक अंधविश्वास में उनकी आस्था नहीं थी। उनका धर्म उनके अंतःकरण के अनुकूल था। गांधी जी अवतारवाद के साथ-साथ गो-पूजा, गो-रक्षा तथा मूर्ति-पूजा में भी विश्वास करते थे। उनका ईश्वर विश्व में व्याप्त है, जिसे प्रत्येक धर्म ने अलग-अलग नाम दिये हैं। धर्म के क्षेत्र में गांधी जी 'गीता' के साथ-साथ कबीर, तुलसीदास और स्वामी विवेकानंद आदि से प्रभावित थे।

२.७.२.१. प्रार्थना-उपासना -

धर्म के क्षेत्र में साधक का हेतु ईश्वर के साथ तादात्म्य स्थापित करना होता है। इसके लिए प्रार्थना-उपासना की आवश्यकता होती है। प्रार्थना आत्मा-परमात्मा के मिलन का माध्यम होती है। गांधी जी के अनुसार प्रार्थना याचना नहीं है, वह तो आत्मा की आकांक्षा का दूसरा नाम है। चित्त को एकाग्र करने के लिए वे 'रामनाम' और प्रार्थना को आवश्यक समझते थे। असह्य वेदना से दुःखित आदमी को वे 'रामनाम' लेने की सलाह देते थे। प्रार्थना हृदय की वस्तु है, इस कारण गूँगे, तोतले, मूढ़ - सभी प्रार्थना कर सकते हैं।

उपासना का अर्थ है - परमेश्वर के पास बैठना। बड़ों के पास बैठने का अर्थ है- तदनुरूप बनना। उपासना बुद्धि का नहीं, श्रद्धा का विषय है। सत्य रूप ईश्वर सब में बसा हुआ है। इसकारण जीव मात्र की सेवा करना भी उपासना ही मानी जायेगी।

२.७.२.२. व्रत-प्रतिज्ञा -

गांधी-विचारधारा में व्रत का महत्त्वपूर्ण स्थान है। व्रत का अर्थ है - जो आचरण हमें सत्य-विचार का अनुसरण करने वाला लगा हो, उस पर अटल भाव से डटे रहने की और उसका विरोधी आचरण कभी न करने की प्रतिज्ञा करना। मनसा, वाचा, कर्मणा से सत्यनिष्ठ रह सकने की योग्य दशा को पहुँचने के लिए प्रतिज्ञायें आवश्यक हैं। मनुष्य जब व्रत के

बंधन में बंध जाता है, तब उसे इधर-उधर भटकना नहीं पड़ता। अहिंसा के उपासक के लिए ब्रह्मचर्य, अस्वाद, अस्तेय, अपरिग्रह और अभय ये पाँच व्रत आवश्यक हैं। इनके साथ ही शरीर-श्रम (स्वावलंबन) तथा स्वदेशी आदि व्रतों की चर्चा भी गांधी जी ने की है।

गांधी-विचारधारा में सत्य और अहिंसा की सिद्धि के लिए ब्रह्मचर्य को अनिवार्य माना है। मन, वचन और कर्म से इन्द्रियों का दमन ही ब्रह्मचर्य है। ब्रह्मचर्य से अभिप्राय संन्यासी का जीवन नहीं, अपितु गृहस्थ को भी ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए। संयत विवाहित जीवन गांधी जी के अनुसार ब्रह्मचर्य का एक अंग है। विवाहित पुरूष द्वारा सन्तानोत्पत्ति के निमित्त की गयी यौन-क्रिया तो सुन्दर व श्रेष्ठ है, परंतु विलास व भोग की दृष्टि से पति-पत्नी का समागम अनुचित है। ब्रह्मचर्य व्रत के पालन के लिए स्वादेन्द्रिय और जननेन्द्रिय - दोनों पर प्रभुत्व प्राप्त करना चाहिए।

गांधी-दर्शन में अस्वाद-व्रत का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। ब्रह्मचर्य व्रत के पालन के लिए स्वादेन्द्रिय पर नियंत्रण करना आवश्यक है। शरीर-रक्षा के लिये अत्यंत अनिवार्य पदार्थों के अतिरिक्त अन्य पदार्थों का पूर्ण त्याग कर देना चाहिए। इससे मनुष्य के विकार शांत हो जाते हैं। अस्वाद के साथ ही गांधी जी ने अस्तेय-व्रत को भी महत्त्वपूर्ण माना था। अस्तेय का अर्थ है - चोरी न करना। गांधी जी के विचार से मनुष्य को शारीरिक, मानसिक एवं वैचारिक आदि में से किसी भी प्रकार की चोरी नहीं करनी चाहिए।

गांधी-दर्शन में अपरिग्रह-व्रत का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। जो वस्तु आज के लिए आवश्यक नहीं है, उसका संचय न करना ही अपरिग्रह है। गांधी जी के अनुसार बहुत लोग अपनी आवश्यकता से अधिक लेते हैं, इसलिए दुनिया में भूखों मरने की नौबत आती है। अस्तेय और अपरिग्रह व्रत का पालन करने वाले को बहुत नम्र, विचारशील, सावधान और सादगी से रहने की जरूरत पड़ती है। असद् विचारों का त्याग तथा सद् विचारों को ग्रहण करना भी अपरिग्रह के अंतर्गत आता है।

अपरिग्रह के साथ ही गांधी जी ने अभय-व्रत को भी महत्त्वपूर्ण माना था। अपने मन के विकारों के अलावा दूसरी आपत्तियों (मौत, धन-दौलत लूट जाने का भय, रोग, प्रतिष्ठा, किसी के बुरा मानने का भय तथा कुटुम्ब-परिवार विषयक भय) से न डरना ही अभय है। असत्य और हिंसा से भय निर्माण होता है। इस कारण अहिंसा एवं सत्य का पालन करने

से अभय व्रत का पालन हो सकता है। गांधी जी के अनुसार कायरता सब से बड़ी हिंसा है। इसलिए हमें निर्भय होना चाहिए।

गांधी जी ने शारीरिक श्रम को विशेष महत्त्व दिया है। इस विषय में वे रस्किन एवं टालस्टाय के विचारों से प्रभावित थे। गांधी जी का यह सिद्धान्त था कि जो रोटी खाता है, उसे मजदूरी करनी चाहिए। उनकी मान्यता थी कि शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति शरीर द्वारा ही होनी चाहिए। मानसिक या बौद्धिक श्रम आत्मा के लिए है,वे शरीर-श्रम के अंतर्गत नहीं आते हैं। मालिक-मजदूर का भेद मिटाने में शरीर-श्रम सहायक होगा, ऐसा गांधी जी का विश्वास था,क्योंकि अगर सभी रोटी के लिए मजदूरी करेंगे,तो ऊँच-नीच का भेद नहीं रह जाएगा। धनिक वर्ग खुद को धन का मालिक नहीं,तो उसका संरक्षक मानेगा और उसका उपयोग वह लोगों की सेवा के लिए करेगा। प्रत्येक व्यक्ति अपना काम खुद करें,यही स्वावलंबन है। इस प्रकार गांधी-दर्शन में शरीर-श्रम अथवा स्वावलंबन को भी महत्त्वपूर्ण माना है।

स्वदेशी-व्रत को महत्त्वपूर्ण मानते हुए गांधी जी ने उसका व्यापक अर्थ लिया है। उनके अनुसार अपने पास रहने वालों की सेवा करना भी स्वदेशी के अंतर्गत आता है। गांधी जी की सामाजिक,आर्थिक,राजनीतिक - सभी मान्यताएं स्वदेशी सिद्धान्त से अनुप्राणित हैं। स्वदेशी व्रत-धारी अपने व्रत का पालन करने के लिए अपने देश की बनी हुई वस्तुओं का उपयोग करता है। गांधी जी के अनुसार 'स्वदेशी' धार्मिक अनुशासन है, जिसका पालन व्यक्ति को उससे होने वाले शारीरिक कष्ट की बिल्कुल उपेक्षा करके करना चाहिए। स्वदेशी हृदय की भावना है, जिसमें स्वदेश-सेवा की भावना निहित है।

२.१.२.१. नैतिक आत्मबल : (नैतिकता) -

गांधी जी के नैतिक विचारों की पृष्ठभूमि विशाल है। उनका विश्वास था कि सत्य ही ईश्वर है, इसके अतिरिक्त ईश्वर की सत्ता अन्यत्र कहीं नहीं है। उनके जीवन की प्रत्येक गतिविधि सत्याचरण के नाम से अभिहित की जा सकती है। उनका सम्पूर्ण जीवन इस बात का द्योतक है कि आध्यात्मिक विकास की स्थिति और सिद्धि शारीरिक, मानसिक एवं चारित्रिक विकास के द्वारा ही सम्भव है। कर्म की श्रेष्ठता के लिए कर्म की प्रेरणा भी श्रेष्ठ होनी चाहिए, ऐसा उनका विश्वास था। 'गीता' का निष्काम कर्म का सिद्धान्त भी यही सन्देश देता है कि अच्छे कर्म का फल शुभ और अशुभ कर्म का फल अशुभ ही होता है। अतः

गांधी जी भी कहते थे कि यदि कोई साधनों की शुद्धता का ध्यान रखें, तो साध्य अपने आप ठीक रहेगा।

गांधी जी के नैतिक विचारों की आधार-शिला अहिंसा है। कार्य की नैतिकता-अनैतिकता अहिंसा की कसौटी पर ही परखी जानी चाहिए। महात्मा जी की नैतिकता का मापदण्ड अहिंसा है। साथ ही उनका विचार था कि नैतिक नीतियों का पालन करते समय सत्य को दृष्टि से ओझल नहीं करना चाहिए। १८

नैतिक अनुशासन के नियम को व्यावहारिक बनाने के लिए गांधी जी व्रत का अनुष्ठान करते हैं। उनके विचार में, व्रत लेने का अर्थ है, उसका सम्पूर्ण पालन करने के लिए मरते दम तक मन, वचन और कर्म से प्रामाणिक तथा दृढ़ प्रयत्न करना। नैतिक बल की उपलब्धि के लिए उन्होंने व्रत तथा प्रतिज्ञा-पालन आदि पर जोर दिया था। उनके अनुसार नैतिक आचरण का पालन करने वाला 'सत्याग्रही' है और उसी की साधना 'सर्वोदय' है। वास्तव में सम्पूर्ण गांधी-विचारधारा नीति पर आश्रित है। नैतिक आचरण करने वाले मनुष्य को अहंकार का त्याग कर नम्रता का स्वीकार करना चाहिए। अभय, अपरिग्रह आदि व्रत भी शुद्ध नैतिक आचरण के हेतु बताये गये हैं।

२.३.३. सामाजिक विचारधारा -

गांधी-विचारधारा के अंतर्गत सामाजिक उत्थान को अत्यंत महत्त्व दिया गया है। गांधी जी भारतीय समाज में आमूल परिवर्तन के पक्षपाती थे। उन्होंने देश में प्रचलित अनेक बुराइयों को दूर करना अपना प्राथमिक कर्तव्य माना था। यद्यपि उनसे पहले ब्रह्मसमाज, आर्यसमाज आदि संस्थाओं ने सामाजिक क्षेत्र में सुधार के अनेक प्रयत्न किये, किन्तु उनका परिणाम विशेष फल नहीं दे सका। गांधी जी ने समाज की प्रत्येक गतिविधि का सूक्ष्मता से अध्ययन किया और परिवर्तन की दिशाएँ सुझाई। अहिंसा की नींव पर एक सुन्दर समाज की स्थापना करना उनका ध्येय था। वे एक ऐसा समाज चाहते थे, जिसमें स्त्री-पुरूष को समान अधिकार प्राप्त हो, जहां सब परस्पर प्रेम-भाव से रहे, जहां सांप्रदायिकता और अस्पृश्यता जैसी कुरीतियाँ न हो । गांधी जी की रामराज्य की स्थापना की कल्पना देश के सामाजिक उत्थान की चरम सीमा है। 'मेरे सपनों का भारत' में गांधी जी ने अपने आदर्श समाज की रूपरेखा प्रस्तुत की है।

सामाजिक सुधार के लिए गांधी जी ने जो रचनात्मक सूत्रों की अठारह सूत्री तालिका प्रस्तुत की थी, वह इस प्रकार थी - १) सांप्रदायिक एकता २) अस्पृश्यता - निवारण, ३) मद्यपान- निषेध, ४) खादी ५) अन्य ग्रामोद्योग ६) स्त्रियों की उन्नति, ७) गांवों की सफाई, ८) नई बुनियादी तालीम, ९) प्रौढ़ शिक्षा, १०) स्वास्थ्य और सफाई की शिक्षा, ११) मातृभाषा - प्रेम, १२) राष्ट्रभाषा - प्रेम, १३) आर्थिक समानता, १४) किसानों का संगठन, १५) मजदूरों का संगठन, १६) विद्यार्थियों का संगठन, १७) आदिवासियों की सेवा, १८) कोढ़ियों की सेवा।

इनमें से प्रमुख बातों का विवेचन नीचे किया जा रहा है -

२.७.७.१. सांप्रदायिक एकता एवं सर्वधर्मसमभाव -

सांप्रदायिक समस्या भारत के कट्टर पंथियों और मध्यवर्गीय लोगों के साथ मिल कर ब्रिटिश साम्राज्यवाद से उत्पन्न चीज है। गांधी जी का यह विश्वास अक्षरशः सत्य था कि जब तक देश के भिन्न-भिन्न संप्रदाय एकता के पवित्र सूत्र में नहीं बँध जाते, तब तक स्वराज्य प्राप्त करना और उसे टिकाये रखना नितान्त असंभव है। उन्होंने सांप्रदायिक वैमनस्य को मिटाने का भरसक प्रयत्न किया। वे चाहते थे कि सभी जातियों के बीच रोटी-बेटी का व्यवहार हो और विभिन्न धर्म तथा संस्कृतियों के बीच का भेदभाव मिट जाये।

गांधी जी हिन्दू और मुसलमानों को सदैव समान दृष्टि से देखते थे। उनके अनुसार हिन्दू-मुसलमान - दोनों ही भारत के समान अधिकारी और दोनों सहोदर भाई के समान हैं। उन्हें दुःख इस बात का था कि इन दोनों के बीच धर्म के नाम पर भयंकर मतभेद था। उनका कहना था कि दूसरे के धर्मों के प्रति उतना ही आदर रखना चाहिए, जितना कि अपने धर्म के प्रति। सांप्रदायिक एकता स्थापित करने के लिए ही गांधी जी खादी, चरखा, गृह उद्योग एवं अस्पृश्यता-निवारण आदि का प्रस्ताव करते थे। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि सांप्रदायिक एकता स्थापित करना गांधी जी का मुख्य लक्ष्य था। वह केवल भारत में ही नहीं, वरन् समस्त विश्व में इस प्रकार की एकता स्थापित करने के पक्ष में थे। मानव के मध्य वे केवल मानवता का सम्बन्ध ही स्थापित करना चाहते थे। सर्वधर्मसमभाव के अनुसार प्रत्येक मतावलम्बी मात्र अपने धर्म को ही श्रेष्ठ न मान कर अन्य मतों व धर्मों के प्रति भी आदर-भाव रखे ।

२.३.३.२. अस्पृश्यता - निवारण (हरिजनोद्धार) -

अस्पृश्यता-निवारण की समस्या गांधी जी के लिए भारत की स्वाधीनता-प्राप्ति की समस्या से बड़ी थी। उनके अनुसार अस्पृश्यता हिन्दू धर्म का अंग नहीं, तो उसमें घुसी हुई सड़ांध है। उसका निवारण करना प्रत्येक हिन्दू का परम कर्तव्य है। यदि यह अस्पृश्यता समय रहते नष्ट न की गयी, तो हिन्दू समाज और हिन्दू धर्म का अस्तित्व ही संकट में पड़ जायेगा। अछूतों के प्रति हिन्दू जनता ने जो अन्याय किया, वह बड़ा भारी कलंक है। गांधी जी के अनुसार छुआछूत दूर करना एक ऐसा प्रायश्चित है, जो सवर्ण हिन्दुओं को हिन्दू धर्म के लिए करना चाहिए। शुद्धि अछूतों की नहीं, बल्कि ऊँची कहलाने वाली जातियों की जरूरी है। हर एक हिन्दू को हरिजनों को अपनाना चाहिए, उनके सुख-दुःखों में भाग लेना चाहिए। गांधी जी उस धर्म को मानने के लिए कदापि तैयार नहीं थे, जो धर्म अस्पृश्यता का समर्थन करता है। वे सारे भारत को अपना परिवार मानने के पक्षपाती थे।

२.३.३.३. स्त्रियों की उन्नति -

गांधी-विचारधारा में नारी-उध्दार की भावना का अत्यधिक महत्त्व है। गांधी जी स्त्रियों की शक्ति से प्रभावित थे। उनके विचार से नारी पुरूष को रिझाने अथवा ललचाने के लिए अपने शरीर को नहीं सजाए, बल्कि अपने हृदय के गुणों से ही सुशोभित होने का प्रयत्न करे। चूल्हा-चौका के साथ ही उसे सामाजिक कार्य में हिस्सा लेना चाहिए। गांधी जी नारी को अबला न मान कर लोक-हित करने वाली शक्ति के रूप में देखते हैं। पुरूष जब किसी उलझन में फँस जाता है, तब स्त्री ही उसका मार्ग-निर्देशन करती है। प्रत्येक सफल पुरूष के पीछे स्त्री ही कार्य करती रहती है। गांधी जी स्त्रियों में सादगी को महत्त्व देते थे। इसी कारण आधुनिक नारी से वे अत्यंत असंतुष्ट थे। स्त्रियों में आत्मबल और निर्भयता आदि गुण भी होने चाहिए। नारी के चरित्र को ही गांधी जी उसका सच्चा आभूषण मानते थे। गांधी जी पुरूषों के समकक्ष ही स्त्रियों को अधिकार दिलाने के पक्ष में थे। उनका मत था कि स्त्री-पुरूष - दोनों ही समाज को गति देने वाले आवश्यक यंत्र हैं। अतः बौद्धिक एवं सामाजिक - दोनों स्तरों पर उनका समान होना आवश्यक है। इसी कारण उन्होंने पुरूषों के समान स्त्री की शिक्षा का भी समर्थन किया था। गांधी जी स्वतंत्रता-आन्दोलन में स्त्रियों के सहभाग को भी महत्त्वपूर्ण मानते थे। इस प्रकार गांधी जी स्त्री की हर प्रकार की स्वतंत्रता

का समर्थन करते थे।

स्त्रियों की उन्नति के अंतर्गत गांधी जी ने वेश्याओं के उद्धार की चर्चा की है। वेश्यावृत्ति को वे समाज का एक अभिशाप मानते थे। सम्पूर्ण नारी जाति के उद्धार के लिए वे वेश्याओं का उद्धार करना आवश्यक मानते थे। गांधी जी परदा-प्रथा के घोर विरोधी थे। उनका यह स्पष्ट विचार था कि परदा-प्रथा स्त्रियों की उन्नति में सब से बड़ी बाधा है। यह प्रथा हर तरह से अकल्याणकारी है। अतः उसका अंत होना ही चाहिए, ऐसा गांधी जी मानते थे। स्त्रियों की पवित्रता के नाम पर परदा-प्रथा का समर्थन करने वालों से गांधी जी कहते थे कि पवित्रता कुछ परदे की आड़ में रखने से नहीं पनपती, परदे की दीवार से उसकी रक्षा नहीं की जा सकती है, उसे तो भीतर से ही पैदा होना होगा।

गांधीजी ने बाल-विवाह का भी विरोध किया था। उनके अनुसार यह प्रथा हमारे आचारों की जड़ को काटती है और हमारे बल का नाश करती है। इस समस्या का हल करने के लिए वे उस पिता के घर का त्याग करने की सलाह देते हैं, जो पिता अपनी छोटी लड़की का विवाह करना चाहता है। विधवा की समाज में करूणाजनक दशा देख कर गांधी जी ने विधवा-विवाह का समर्थन किया था। जो माता-पिता अपने संरक्षत्व का दुरूपयोग करके अपनी दुधमुँही लड़की का विवाह किसी जर्जर बूढ़े से अथवा किशोर से कर देते हैं, तो उनका कम-से-कम यह कर्तव्य है कि विधवा हो जाने पर उसका पुनर्विवाह कर अपने पापों का प्रायश्चित कर ले। गांधी जी के अनुसार हिन्दू विधवा त्याग और पवित्रता की मूर्ति होती है। वह माता की तरह सबके लिए पूज्य होती है। उसे अशुभ न मानते हुए उसके सम्मान और प्रतिष्ठा की रक्षा करनी चाहिए। विधवा-विवाह किसी भी प्रकार से पाप नहीं है। गांधी जी मानते थे कि जिस प्रकार विधुर पुरूष के लिए पुनर्विवाह का अधिकार है, उसी प्रकार विधवा के लिए भी पुनर्विवाह का अधिकार होना चाहिए।

गांधी जी ने सती-प्रथा की सदैव निंदा की है। वे मानते थे कि स्त्रियों के सती हो जाने से समाज का कल्याण कभी नही हो सकता। जीवित रह कर वे अपने समाज, देश और विश्व की सेवा कर सकती हैं। सती हो जाना पवित्रता की कसौटी नहीं है। यह पवित्रता तो जीवित रह कर अनवरत प्रयत्न करने से प्राप्त होती है।

२.१.१.४. आंतरजातीय विवाह का समर्थन –

गांधी जी की प्रबल आकांक्षा थी कि विवाह के मामले में जाति की दीवार खड़ी नहीं करनी चाहिए। वर्ण-व्यवस्था जितनी जल्दी टूटे, उतना ही शुभ है। वे चाहते थे कि भारत में आंतरजातीय विवाहों को पूरा-पूरा प्रोत्साहन मिलना चाहिए। वे तो यहां तक मानते थे कि परदेशी और परधर्मी के साथ विवाह करने में धर्म का विरोध नहीं होना चाहिए। गांधी जी की दृष्टि में जाति-भेद की समस्या हल करने का एकमात्र साधन है- आंतरजातीय एवं आंतरधर्मीय विवाह। इसी उद्देश्य से ब्रिटिश शासन ने सन् १९१८ में आंतरजातीय विवाह का कानून बनाया था। **१९** गांधी जी ने खुल कर इस कानून का समर्थन किया था।

२.१.१.५. शराब – बंदी (मादक वस्तुओं का निषेध) –

देश के नैतिक और आर्थिक हित की रक्षा के उद्देश्य से लगभग पच्चीस वर्ष तक गांधी जी के रचनात्मक कार्यक्रम के मुख्य अंगों में से एक महत्त्वपूर्ण अंग मादक वस्तुओं का निषेध था। महात्मा जी ने मादक द्रव्यों के सेवन का सम्बन्ध नैतिकता से जोड़ा है और वे यह मानते है कि शराब पीने वाला व्यक्ति नैतिक दृष्टि से गिर जाता है और उसकी आत्मा मर जाती है। उनका विश्वास था कि जब तक नगर और ग्रामवासी मादक वस्तुओं का त्याग नहीं कर देता, तब तक वह नैतिक क्षमता और सत्याग्रह का पालन नहीं कर सकता ।

२.१.१.६. ग्राम-सुधार –

गांधी जी गांवों में सुधार कर ही समस्त देश में सुधार का स्वप्न देखते थे। ग्रामीण भाईयों की ओर उनका सर्वाधिक ध्यान रहा है। भारत की ९० प्रतिशत जनता ग्रामों में निवास करती हैं। गांधी जी ने ग्रामों की सफाई तथा पंचायत राज्य की स्थापना के द्वारा ग्रामों का सुधार करना चाहा था। उनका विचार था कि ग्रामों का सुधार बिना स्वास्थ्य और सफाई की शिक्षा के असंभव है। इसके लिए वे ग्रामवासियों में शिक्षा का प्रसार करना चाहते थे। ग्रामवासियों का आर्थिक स्तर सुधारने के लिए वे खेती के साथ-साथ सहायक उद्योग-धंदे करने का प्रस्ताव करते थे। साथ ही उनमें प्रचलित अंध-विश्वासों और रूढ़ियों पर प्रहार कर उनका मानसिक विकास करवाना चाहते थे। मादक वस्तुओं के निषेध के साथ वे उन्हें सात्विक भोजन करने का सुझाव देते थे।

ग्रामीण जनता स्वावलंबी बने तथा ग्रामों में जनता का राज्य स्थापित हो, इस उद्देश्य

से गांधी जी ग्रामों में 'पंचायत राज्य' की स्थापना करना चाहते थे। गांव अपनी आवश्यकताएँ स्वयं पूरी कर ले और सारा कारोबार खुद चलाये, यहीं उनका आदर्श 'रामराज्य' था।

२.३.३.७. स्वास्थ्य और सफाई की शिक्षा –

गांधी जी का व्यक्तित्व बहुमुखी था । वे स्वास्थ्य तथा सफाई की ओर अधिक ध्यान देते थे। उनका विचार था कि बौद्धिक स्वच्छता के साथ-साथ शारीरिक और आस पास की सफाई रखनी चाहिए । गांधी जी के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को यह आवश्यक है कि वह अपने आवास के स्थान की सफाई करने के साथ-साथ दूसरों की सुविधा का भी ध्यान रखे। स्वयं के घर की सफाई के साथ वह सार्वजनिक स्वास्थ्य की भी चिन्ता करें। मुहल्ले की सफाई के साथ ही वह नगर, प्रांत एवं राष्ट्र की सफाई का पूरा-पूरा ध्यान रखे।

गांधी जी के विचार से मनुष्य को सात्विक भोजन करना चाहिए। सदैव अन्न ही ग्रहण न कर फलों का भी सेवन करना चाहिए । किसी भी नशीले एवं मादक द्रव्यों का सेवन नहीं करना चाहिए। सप्ताह में एक दिन अवश्य व्रत करना चाहिए, जो शारीरिक एवं आत्मिक – दोनों प्रकार के स्वास्थ्यों के लिए लाभदायक हैं।

२.३.३.८ किसानों, मजदूरों और विद्यार्थियों का संगठन –

गांधी जी के व्यावहारिक कार्यक्रम मे किसान, मजदूर और विद्यार्थियो का संगठन भी सम्मिलित था। भारतवर्ष कृषि-प्रधान देश है। यहां की लगभग ९० प्रतिशत जनता ग्रामों में निवास करती हैं, जिनका मुख्य व्यवसाय खेती है। अतः किसानों की उन्नति तथा उनके संगठन के बारे में गांधी जी ने भरसक प्रयत्न किया था। इसी प्रकार वे मजदूर-संगठन के पक्षपाती थे। गांधी जी अहमदाबाद के मजदूरों का संगठन सम्पूर्ण देश के लिए आदर्श स्वीकार करते थे। मजदूरों को अपने कर्तव्य का सदैव ध्यान रखना चाहिए। उनकी शिक्षा के लिए रात्रि-पाठशालाओं और उनके शिशुओं के लिए बुनियादी स्कूलों का प्रबन्ध करना चाहिए। उन्हें अहिंसक हड़ताल की शिक्षा देनी चाहिए।

विद्यार्थियों के संगठन के बारे में गांधी जी का विचार था कि उन्हें राजनीतिक दलों तथा सांप्रदायिकता से एकदम अलग रहना चाहिए। उनका कर्तव्य है कि वह सूत कातें, खादी धारण करें और स्वदेशी वस्तुओं को व्यवहार में लाये। वे राष्ट्रभाषा का अच्छा ज्ञान प्राप्त करें एवं मातृभाषा के साहित्य-समृद्धि में सदैव लगे रहे। सांप्रदायिक झगडों का अहिंसक

रीति से अंत करने के लिए उन्हें सदा तत्पर रहना चाहिए।

२.३.३.९. नई बुनियादी तालीम –

गांधी जी केवल एक उच्च कोटि के राजनीतिज्ञ ही नहीं, वरन् महान समाज-सुधारक भी थे। समाज की बहुमुखी समस्याओं का समाधान उनके विचारों में प्राप्त होता है। राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के क्षेत्र में शिक्षा के महत्त्व को गांधी जी ने भली-भाँति अनुभव किया था। इसी कारण सन् १९३७ में जब भारत में अनेकानेक प्रांतों में काँग्रेस मंत्रिमंडलों की स्थापना हुई, तब उन्होंने भारतवासियों का ध्यान शिक्षा की ओर आकर्षित करते हुए अपने पत्र 'हरिजन' में लेखमाला लिखना आरंभ किया। ये लेख बेसिक शिक्षा-योजना के आधार स्तम्भ बने। शिक्षा से तात्पर्य गांधी जी बच्चे एवं मनुष्य की सम्पूर्ण शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक शक्तियों का सर्वतोमुखी विकास मानते थे। अतः केवल साक्षरता को ही वे शिक्षा नहीं मानते थे। बच्चों को साक्षर बनाने के साथ-साथ हस्तशिल्प आदि की शिक्षा के द्वारा उन्हें उत्पादन करने योग्य बनाना गांधी जी की शिक्षा का उद्देश्य था।

२.३.३.१०. मातृभाषा – प्रेम –

गांधी जी मातृभाषा के महत्त्व को भी स्वीकार करते थे। उनका विचार था कि एक हिन्दू को संस्कृत, मुसलमान को उर्दू और पारसी को फारसी का अच्छा ज्ञान होना चाहिए। उन्होंने मातृभाषा को ही बेसिक शिक्षा का माध्यम बनाया था। उनका विश्वास था कि मातृभाषा के प्रति प्रेम ही भारत की मातृभाषाओं को जीवित रख सकता है।

२.३.३.११. राष्ट्रभाषा – प्रेम –

भाषा की समस्या पर गांधी जी ने अपने मत बड़े स्पष्ट शब्दों में व्यक्त किये थे। उनके विचार से राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र को मृतवत् समझना चाहिए। गांधी जी हिन्दी भाषा तथा देवनागरी लिपि की शक्ति से पूर्णतः परिचित थे। अतः उन्होंने यह घोषित किया कि देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दुस्तानी अर्थात हिन्दी और उर्दू – दोनों के मिश्रण से बनी हुई भाषा ही भारत की राष्ट्रभाषा बन सकती है। दक्षिण भारत में राष्ट्रभाषा हिन्दी का प्रचार-प्रसार करने में गांधी जी ने अपना महत्त्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया। गांधी जी हिन्दी भाषा को राष्ट्रीय एकता का प्रतीक स्वीकार करते थे तथा स्वदेशाभिमान को स्थिर रखने के लिए वे हिन्दी सीखना आवश्यक समझते थे।

२.३.३.१२. सेवा -

सेवा गांधी-दर्शन का महत्त्वपूर्ण अंग है। सेवा के अंतर्गत गांधी जी मानव की सेवा, पशुओं तथा प्रकृति की सेवा का समावेश करते थे। वे जीवन भर सेवा-कार्यों में रत रहे। वे रोग की भयंकरता को देख कर भयभीत नहीं होते थे। उन्होंने लगभग एक माह तक एक कोढ़ी मनुष्य की सेवा की थी। वे प्रत्येक व्यक्ति को इस बात का उपदेश देते थे कि समाज के स्वस्थ अंग का पालन-पोषण जितना आवश्यक है, समाज के गर्हित अंगों की सेवा करना भी उससे अधिक आवश्यक है। गांधी जी की इस सेवा-भावना के मूल में उनकी सरलता, सहृदयता तथा मानवता के प्रति प्रेम की भावना दृष्टिगोचर होती है।

२.३.४. आर्थिक विचारधारा -

गांधीवाद, समाजवाद, मार्क्सवाद, साम्यवाद आदि विभिन्न विचार-दर्शनों में आर्थिक समानता की चर्चा की गई है। परंतु गांधी-प्रतिपादित आर्थिक समानता का रूप अन्य विचार-दर्शनों से अलग है। जैसा कि सर्वविदित हैं, अहिंसा गांधीवाद का प्राण है। अतः किसी भी प्रकार के सामाजिक, आर्थिक अथवा राजनीतिक परिवर्तन के लिये गांधीवाद में बल-प्रयोग या हिंसा वर्जित है। अतः आर्थिक समानता के क्षेत्र में भी गांधी जी आत्मशुद्धि, हृदय-परिवर्तन, अस्तेय, ट्रस्टीशिप, विकेंद्रीकरण, अपरिग्रह, शरीर-श्रम, खादी, ग्रामोद्योग तथा स्वदेशी आदि का आश्रय ग्रहण कर समाज से पूँजीवादी व्यवस्था का अंत करने का प्रस्ताव करते हैं। वे समाज में पूँजीपतियों का अस्तित्व बनाये रखने के साथ-साथ उनके हृदय-परिर्वतन की आकांक्षा करते थे। गांधी जी की आर्थिक विचारधारा को समझने के लिए निम्न बातों का अध्ययन आवश्यक है।

२.३.४.१. संरक्षता का सिद्धान्त (ट्रस्टीशिप) -

'ट्रस्टी' शब्द के लिए संस्कृत में 'न्यास' शब्द का प्रयोग किया जाता है, जिसका जन-प्रचलित अर्थ 'धरोहर' या 'थाती' है। [२०] ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त के अनुसार केंद्रित धन (न्यास) प्रत्यार्पण के लिए होता है, उपभोग के लिए नहीं। जिन व्यक्तियों तथा संस्थाओं के पास जितनी सम्पत्ति है, वह न्यास है। वह केवल सुरक्षित रहे, इसलिए ही उनके पास रखी है।

आधुनिक यांत्रीकरण के युग में सम्पत्ति का केंद्रीकरण आरम्भ हो गया और

परिणामस्वरूप पूँजीवादी समाज का जन्म हुआ। पूँजीवादी व्यवस्था ने शोषण-वृत्ति को जन्म दिया और स्वार्थ-साधना ही पूँजीवादियों का एकमात्र लक्ष्य हो गया। सम्पत्ति के स्वामित्व और एकत्रित करने की कोई सीमा न रह गयी। इससे समाज में वर्ग-व्यवस्था का इतना विकृत रूप हो गया कि एक ओर धन के ढेरों पर बैठे पूँजीपति, तो दूसरी ओर भूखा तथा नग्न मजदूर वर्ग। इस आर्थिक असमानता को देख कर गांधी जी व्यथित हो उठे और उन्होंने संरक्षता का सिद्धान्त प्रतिपादित किया । उनके अनुसार व्यक्ति सम्पत्ति का संग्रह न करे, केवल उसका रक्षक रहे और उसे समाज के कल्याण के लिए व्यय करता रहे। गांधी जी का मत था कि पूँजीपति को अपने को सम्पत्ति का स्वामी नहीं, वरन् 'ट्रस्टी' (संरक्षक) मात्र समझना चाहिए। उसे केवल अपनी आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए धन लेना चाहिए। शेष धन का परित्याग कर उसे समाज-हित में व्यय करना चाहिए।

गांधी जी के अनुसार किसी भी कारखाने में शेयर होल्डर, डायरेक्टर, मैनेंजर, मजदूर - कोई भी एक वर्ग स्वामी नहीं, वे केवल उस कारखाने के सहयोगी मात्र हैं। अत: उनका धर्म हैं कि वे परिश्रम करें और अपना उचित पारिश्रमिक ले, तथा शेष धन को जनहित में व्यय करें। उनके अनुसार जगत की समस्त सृष्टियों का स्वामी ईश्वर हैं। अतः इस संसार के समस्त प्रणियों का कर्तव्य हैं कि वे अपनी आवश्यकताओं को सीमित करे और अपने परिश्रम का उतना ही का पारिश्रमिक लें, अपनी बौद्धिक क्षमता के अनुसार नहीं। इससे यह भी स्पष्ट हो जायेगा कि किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत सम्पत्ति की मात्रा कितनी होनी चाहिए। व्यक्ति केवल उतना ही धन ग्रहण करें, जितना उसे जीवित रखने के लिए अथवा उसकी अनिवार्य आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त हो। शेष वस्तुएँ और धन वह राष्ट्र के कोष में जमा करें।

गांधी-विचार-दर्शन के अनुसार समाज में आर्थिक असमानता का मूल कारण धनिकों की अनावश्यक सम्पत्ति-संग्रह की हिंसात्मक लालसा है। ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त के द्वारा वे आर्थिक असमानता के इस मूल पर ही प्रहार करना चाहते हैं, जिससे असमान वितरण का अंत होगा और मजदूर से मालिक तक धन का समान वितरण होगा।

२.३.४.२. सर्वोदय -

गांधी जी के जीवनादर्श को यदि हम एक शब्द में कहना चाहें, तो वह शब्द होगा

– 'सर्वोदय'। [२१] गांधी-प्रतिपादित अर्थ-व्यवस्था का नाम है – 'सर्वोदय'। सब की उन्नति, सब का हित और सब का उत्थान यहीं इस शब्द का व्यापक अर्थ है। सब सुखी हो, सब निराभय हो, सब श्रेय को देखे – यह प्राचीन ऋषि-वाणी ही गांधी जी का सर्वोदय है। राजनीतिक स्वतंत्रता सर्वोदय का एक अंग है। गांधी जी की सर्वोदय-योजना में राजनीतिक गुलामी सब से बड़ी बाधा थी।

सर्वोदय सिद्धान्त के अनुसार सारे संसार की अर्थ-व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि उसमें बिना खाने और कपड़े के कोई भी रहने न पाये। हर एक को अपनी गुजर-बसर के लिए काफी काम मिलना ही चाहिए। यह आदर्श तभी सिद्ध होगा, जब जीवन की प्राथमिक आवश्यकताएँ पूरी करने के साधनों पर जनता का अधिकार रहेगा। जिस प्रकार भगवान की पैदा की हुई हवा और पानी सब को मुफ्त मयस्सर होता है, या होना चाहिए, उसी तरह ये साधन भी सब को बिना रोक-टोक के मिलने चाहिए। उन्हें दूसरों को लूटने के लिए लेन-देन की चीजें हरगिज नहीं बनने देना चाहिए।

सर्वोदय ऐसे वर्ग-विहीन, जाति-विहीन और शोषण-विहीन समाज की स्थापना करना चाहता है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति और समूह को अपने सर्वांगीण विकास के साधन और अवसर मिलेंगे। 'बहुजन हिताय बहुजन सुखाय' की अपेक्षा यह 'सर्वजन हिताय सर्वजन सुखाय' की परिकल्पना में विश्वास करता हैं।

२.३.४.३. ग्रामीण उद्योग-धंदों का प्रचार –

नियोजित अर्थ-व्यवस्था के गांधी-मार्ग में ग्रामीण उद्योग-धंदों का प्रचार महत्त्वपूर्ण है। देश में बड़े-बड़े कारखाने स्थापित करना ग्रामीणों के प्रति अन्याय है। यांत्रीकरण से निर्मित बेकारी को दूर करने तथा ग्रामों को स्वावलंबी बनाने का एकमात्र साधन ग्रामीण उद्योग-धंदों का प्रचार है। नगरों के उद्योग अर्थात कारखाने लाखों व्यक्तियों का व्यवसाय कुछ एक व्यक्तियों तक ही सीमित करते हैं, जिससे बेकारी बढ़ती है और सम्पत्ति का भी केंद्रीकरण हो जाता है। इन समस्याओं का हल ग्रामीण उद्योग-धंदों के प्रचार में है।

ग्रामीण उद्योग-धंदों में चरखा तथा खादी सर्वप्रमुख है। ग्रामों में चरखा-संघ खोल कर खादी का प्रचार किया जा सकता है। इससे कपड़े की समस्या हल हो सकती है, साथ ही स्वदेशी की गरिमा भी बढ़ सकती है। खादी के अतिरिक्त दियासलाई बनाने का काम, ऊन

का व्यवसाय, चमड़े का काम, लकड़ी का काम आदि अनेक व्यवसाय हैं, जिन्हें व्यक्ति घर बैठे अपने अवकाश के समय में कर सकता है। इन्हीं व्यवसायों के साथ ही गांधी जी मधुमक्खी-पालन तथा गो-पालन आदि व्यवसायों का भी प्रस्ताव करते थे। उनका विचार था कि ये छोटे-मोटे कुटीर उद्योग यांत्रीकरण के दोषों से मुक्ति दिला सकते हैं, साथ ही ग्रामीणों के लिये जीविकोपार्जन का साधन भी उपलब्ध करते हैं।

२.३.४.४. यंत्रीकरण-निषेध (मशीनों का विरोध) –

आर्थिक समानता के लिए गांधी जी ने मशीनों का विरोध किया था। वे मशीनों का पूर्ण बहिष्कार नहीं चाहते थे, परंतु मशीन-युग के विरोधी अवश्य थे। गांधी जी मशीनों पर नियंत्रण के पक्षपाती थे। गांधी-विचारधारा में मशीनों का विरोध इसलिए किया गया है कि उसके उपयोग से सम्पत्ति पूँजीपतियों के हाथ में एकत्र हो जाती है और बेकारी बढ़ती है। गांधी जी उन मशीनों का स्वीकार करते थे, जो मजदूरों की सहायता करती हैं और उनकी कार्यक्षमता में वृद्धि करती हैं।

२.३.५. राजनीतिक विचारधारा –

भारतीय राजनीति में प्रवेश कर गांधी जी ने यह अनुभव किया कि राजनीति को समाज के एक समूह ने स्वार्थ-सिद्धि के लिए अपने हाथ में शक्तिशाली अस्त्र बना रखा है और वर्तमान शासन-तंत्र को जटिल बना दिया है। इस जटिलता को दूर करते हुए गांधी जी ने पहली बार राजनीतिक क्षेत्र में नयी चेतना उत्पन्न की। उनकी दृष्टि में राजनीतिक चेतना धार्मिक चेतना है। गांधी जी का राजनीतिक दर्शन उनके धार्मिक तथा नैतिक सिद्धान्तों का सार है। धर्म का राजनीति में प्रवेश कराके धर्ममय राजनीति की नींव डालने वाले गांधी जी पहले महात्मा हैं।

२.३.५.१. सत्याग्रह : राष्ट्रीय क्रान्तिशास्त्र एवं समाज-संगठन-शास्त्र –

सत्याग्रह राष्ट्रीय क्रान्तिशास्त्र के साथ-साथ समाज-संगठन-शास्त्र अथवा समाज धारणा शास्त्र भी है। सत्याग्रह अहिंसक प्रतिरोध से कहीं अधिक व्यापक है। सत्याग्रह का शब्दिक अर्थ है – सत्य को मान कर किसी वस्तु के लिए आग्रह करना। यह सत्य और अहिंसा से उत्पन्न होने वाला बल है। सर्वोच्च्य सत्य है आध्यात्मिक एकता और उसकी उपलब्धि का एकमात्र मार्ग है – अहिंसक होना। सत्याग्रह प्रतिपक्षी को कष्ट देकर नहीं,

स्वयं कष्ट सह कर सत्य की रक्षा करना है। सत्याग्रह सत्य के लिए तपस्या है। इस व्यापक अर्थ में, सत्याग्रह में सब विधायक सुधारों का समावेश हो जाता है। सत्याग्रह का उद्देश्य है - विरोधी का हृदय-परिवर्तन करना और उसकी भूल सुधारना। अतः गांधी जी सत्याग्रही के लिए यह आवश्यक मानते थे कि वह अन्याय का विरोध करते समय अपार कष्ट सह कर प्रतिपक्षी के हृदय पर प्रेम की शक्ति से प्रभाव डाले, न कि हिंसा की शक्ति से।

सत्याग्रह का अर्थ है - सत्य पर दृढ़ता, प्रत्येक दशा में सत्य पर आरूढ़ रहना। गांधी जी ने सत्याग्रह को भारत की अनेक बीमारियों के उपचार के लिए रामबाण उपाय माना है। वे तो इसे ऐसी तलवार भी मानते हैं, जिसके दोनों ओर धार है और जो बिना खून बहाये कारगर होती है। सत्याग्रही के लिए हार कभी नहीं है, वह सदैव विजयी होता है। वह अपने शत्रु को भी हानि नहीं पहुँचाता है। जो मनुष्य व्यक्तिगत हानि-लाभ की भावना से उपर नहीं उठ सकता, वह सत्याग्रही होने के अयोग्य है। दक्षिण आफ्रिका में, वहां की सरकार के विरूद्ध गांधी जी ने पहली बार सत्याग्रह का प्रयोग किया था। वहां की सफलता के बाद उन्होंने उसे भारतीय राजनीति में भी अपनाया। इससे स्पष्ट होता है कि यह केवल सिद्धान्त मात्र नहीं है, प्रत्यक्ष आचरण की वस्तु भी है। सत्याग्रही के लिए यह आवश्यक है कि कितनी ही उत्तेजक परिस्थितियां क्यों न हो, वह अपने चित्त को सदैव स्थिर रखे तथा अहिंसा, सत्य और नम्रता के अवलम्ब को न छोड़े। असहयोग, सविनय-अवज्ञा, उपवास, धरना एवं हड़ताल आदि अहिंसक प्रतिरोध के विभिन्न रूप सत्याग्रह के अंतर्गत समाविष्ट हो जाते हैं।

२.३.६. कला, साहित्य तथा संस्कृति के सम्बन्ध में गांधी-विचारधारा -

गांधी जी मात्र राजनीतिक विचारक एवं समाज-सुधारक ही नहीं थे, अपितु कला, साहित्य तथा संस्कृति के मर्मज्ञ भी थे। कला के विषय में उनका मत था कि सर्वोत्कृष्ठ कला व्यक्ति-भोग्य नहीं, तो सर्व-भोग्य होती है। वे 'कला जीवन के लिए' सिद्धान्त के पक्षपाती थे। उनके अनुसार कला की सार्थकता जीवन के निमित्त ही हो सकती है। उन्होंने कला को उसी अंश तक स्वीकार किया है, जिस अंश तक वह कल्याणकारी एवं मंगलकारी है। साहित्य के विषय में उनकी यह स्पष्ट धारणा थी कि सच्चा साहित्य समाजलक्षी होता

है। साहित्य की भाषा के सम्बन्ध में गांधी जी का स्पष्ट मत था कि वह सीधी-सादी तथा सरल हो।

गांधी जी भारतीय संस्कृति की गौरवमयी परम्परा के साक्षात् रूप थे। वे भारतीय संस्कृति की मूल्यवान निधियों में विश्वास करते थे। उनके अनुसार संस्कृति से विच्छिन्न होने का अर्थ है - आत्महत्या करना। साथ ही वे संस्कृति को सीखने, ग्रहण करने और उसके अनुसार चलने का आदेश देते है।

इसप्रकार हम देखते हैं कि समकालीन जीवन का प्रत्येक पक्ष गांधीवाद से सम्बद्ध है। सुमित्रानन्दन पन्त के शब्दों में -

" गांधीवाद जगत में आया, ले मानवता का नव मान।
सत्य, अहिंसा से मनुजोचित नव-संस्कृति करने निर्माण ।।
गांधीवाद हमें जीवन भर देता अंतर्गत विश्वास,
मानव की निस्सीम शक्ति का उसमें मिलता चिर आभास ।। " २२

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि गांधी जी के सिद्धान्तों का सम्बन्ध प्रत्यक्ष जीवन से है। विभिन्न विद्वानों की 'गांधीवाद' की परिभाषाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि गांधीवाद 'गांधी जी की जीवन-दृष्टि' का ही नाम है। गांधी जी का व्यक्तित्व एवं उनकी जीवन-दृष्टि इतनी विशाल थी कि समकालीन जीवन का प्रत्येक पक्ष उनसे किसी-न-किसी रूप में अवश्य प्रभावित हुआ है। कला और साहित्य भी उससे अछूते नहीं रहे हैं। यद्यपि गांधीवाद के पीछे मार्क्सवाद के समान कोई शास्त्रीय अध्ययन नहीं है, फिर भी यह मनुष्य-जीवन के निकट है और उसकी हर समस्या का समाधान करने का प्रयास करता है।

उद्धरण-सूची :

१. 'गांधी और गांधीवाद', पट्टाभिसीतारमैया, (प्रथम भाग), पृ.२६

('गांधी विचारधारा का हिन्दी साहित्य पर प्रभाव', डॉ. अरविन्द जोशी, पृ.५५ से उद्धृत)

२. 'गांधी और गांधीवाद', पट्टाभिसीतारमैया, (प्रथम भाग), पृ.२६

('हिन्दी साहित्य मे गांधी चेतना', डॉ. रमेश चन्द्र शर्मा, पृ. ३२-३३ से उद्धृत)

३. वही, पृ.३३ से उद्धृत

४. 'बापू और मानवता' कमलापति त्रिपाठी, पृ.१६५

('गांधी विचारधारा का हिन्दी साहित्य पर प्रभाव', डॉ. अरविन्द जोशी, पृ.५६ से उद्धृत)

५. 'महात्मा गांधी', रामनाथ सुमन, पृ.१८८

('गांधी विचारधारा का हिन्दी साहित्य पर प्रभाव', डॉ. अरविन्द जोशी, पृ.५६ से उद्धृत)

६. 'स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य में गांधीवाद', डॉ. कु. शैलबाला,पृ.७

७. वही, पृ.३३

८. 'हिन्दी साहित्य कोश' (प्रथम संस्करण), पृ.२५६ (प्रथम भाग)

९. 'हमारा गांधीवाद आज कहां है ?', डॉ. सम्पूर्णानन्द, पृ.१९

१०. दै. महाराष्ट्र टाइम्स, मैफल, रविवार ता. ३ अक्तूबर १९९३

('गांधी-विचार दर्शन मराठी साहित्य में नहीं है', ग.प्र.प्रधान जी के लेख के आधार पर)

११. 'हिन्दी साहित्य कोश' (प्रथम संस्करण), पृ.२५६

१२. 'स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य में गांधीवाद', डॉ. कु. शैलबाला,पृ.७

१३. वही, पृ.७

१४. 'सोबत' १९९१, 'विभाजन : युगान्त के पूर्व का अंधःकार', वि.ग. कानिटकर,पृ.७

१५. दै. नवभारत टाइम्स, बम्बई, २८ मार्च १९९४,

('दलितों की मुक्ति में गांधी की भूमिका', गिरीश मिश्र, पृ.४)

१६. यंग इंडिया, ११ अक्तूबर १९२८

('हिन्दी साहित्य में गांधी चेतना', डॉ. रमेश चन्द्र शर्मा, पृ.४४ से उद्धृत)

१७. 'फिलोसोफी ऑफ गांधीजी', धीरेन्द्र मोहनदत्त

('गांधी विचारधारा का हिन्दी साहित्य पर प्रभाव', डॉ. अरविन्द जोशी, पृ.६४-६५ से उद्धृत)

१८. 'स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य में गांधीवाद', डॉ. कु. शैलबाला,पृ.९१

१९. दै. पुढारी, 'बहार', ता. ७ नवम्बर १९९३,

('आंतरजातीय और आंतरधर्मीय विवाह', प्रा. डॉ. रमेश जाधव जी के लेख के आधार पर)

२०. 'स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य में गांधीवाद', डॉ. कु. शैलबाला,पृ.६०

२१. 'हिन्दी साहित्य में गांधी चेतना', डॉ. रमेश चन्द्र शर्मा, पृ. ६७

२२. 'गांधी विचारधारा का हिन्दी साहित्य पर प्रभाव', डॉ. अरविन्द जोशी, पृ. ५८

२३. 'निबन्ध-पारिजात', संसारचंद्र (संपादक), पृ.१४

('मानवता के आधार-स्तंभ' निबन्ध से उद्धृत)